5 श्रीराम शर्मा

जीवन-परिचय–श्रीराम शर्मा का जन्म उत्तर प्रदेश के मैनपुरी जिले के किरथरा (मक्खनपुर के पास) नामक गाँव में 23 मार्च, सन् 1892 ई० को हुआ था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा मक्खनपुर में ही हुई। इसके पश्चात् इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। ये अपने बाल्यकाल से ही अत्यन्त साहसी एवं आत्मविश्वासी थे। राष्ट्रीयता की भावना भी इनमें कूट-कूटकर भरी हुई थी। प्रारम्भ में इन्होंने शिक्षण-कार्य भी किया। राष्ट्रीय आन्दोलन में इन्होंने सक्रिय भाग लिया और जेल भी गये। आत्मविश्वास इनका इतना सबल था कि बड़ी-से-बड़ी कठिनाई आने पर भी विह्वल नहीं होते थे। इनका विशेष झुकाव लेखन और पत्रकारिता की ओर था। ये लम्बे समय तक 'विशाल भारत' पत्रिका के सम्पादक रहे। इनके जीवन के अन्तिम दिन बड़ी कठिनाई से बीते। लम्बी बीमारी के बाद सन् 1967 ई० में इनका स्वर्गवास हो गया।

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म-स्थान–**किरथरा (मैनपुरी), उ०प्र०।
- **जन्म एवं मृत्यु सन्–**1892 ई०, 1967 ई०।
- **भाषा–**सहज, सरल, प्रवाहयुक्त खड़ीबोली।
- **शैली–**चित्रात्मक, आत्मकथात्मक, वर्णनात्मक, विवेचनात्मक।
- शुक्ल एवं शुक्लोत्तर-युग के लेखक।
- **सम्पादन–**विशाल भारत।
- **हिन्दी साहित्य में स्थान–**शिकार साहित्य के रूप में चर्चित।

साहित्यिक परिचय–श्रीराम शर्मा ने अपना साहित्यिक जीवन पत्रकारिता से आरम्भ किया। 'विशाल भारत' के सम्पादन के अतिरिक्त इन्होंने गणेशशंकर विद्यार्थी के दैनिक पत्र 'प्रताप' में भी सहसम्पादक के रूप में कार्य किया। राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत एवं जनमानस को झकझोर देनेवाले लेख लिखकर इन्होंने अपार ख्याति अर्जित की। ये शिकार-साहित्य के प्रसिद्ध लेखक थे। हिन्दी-साहित्य में शिकार-साहित्य का प्रारम्भ इन्हीं के द्वारा माना जाता है। सम्पादन एवं शिकार-साहित्य के अतिरिक्त इन्होंने संस्मरण और आत्मकथा आदि विधाओं के क्षेत्र में भी अपनी प्रखर प्रतिभा का परिचय दिया। इन्होंने ज्ञानवर्द्धक एवं विचारोत्तेजक लेख भी लिखे हैं, जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं।

कृतियाँ–शर्मा जी ने संस्मरण, जीवनी, शिकार-साहित्य आदि विविध विधाओं में साहित्य का सृजन किया था। इनकी कृतियों का विवरण इस प्रकार है–

शिकार-साहित्य–'प्राणों का सौदा', 'जंगल के जीव', 'बोलती प्रतिमा' और 'शिकार'। इन सभी रचनाओं में शिकार का रोमांचकारी वर्णन किया गया है। इसके साथ ही पशुओं के मनोविज्ञान का भी सम्यक् परिचय मिलता है। **संस्मरण-साहित्य–**

'सेवा ग्राम की डायरी', 'सन् बयालीस के संस्मरण'। इनमें लेखक ने तत्कालीन समाज की झाँकी बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत की है। **जीवनी–**'गंगा मैया' एवं 'नेताजी'। इसके अतिरिक्त विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित फुटकर लेख भी आपकी साहित्य-साधना के ही अंग हैं।

भाषा-शैली–शर्मा जी की भाषा सहज, प्रवाहपूर्ण एवं प्रभावशाली है। भाषा की दृष्टि से इन्होंने प्रेमचन्द जी के समान ही प्रयोग किये हैं। इन्होंने अपनी भाषा को सरल एवं सुबोध बनाने के लिए संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी के शब्दों के साथ-साथ लोकभाषा के शब्दों के भी प्रयोग किये हैं। मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग इनके कथन को स्पष्ट एवं प्रभावी बनाता है। 'रोजाना', 'आदत' आदि उर्दू के शब्दों के साथ मृग-शावक जैसे संस्कृत शब्द-प्रयोग भी किये हैं, पर कहीं भी भाषा का रूप अस्वाभाविक नहीं होने पाया।

शर्मा जी की रचना-शैली वर्णनप्रधान है। अपने वर्णन में दृश्य अथवा घटना का ऐसा चित्र खींच देते हैं जिससे पाठक का भावात्मक तादात्म्य स्थापित हो जाता है। इनकी कृतियों में चित्रात्मक, आत्मकथात्मक, वर्णनात्मक एवं विवेचनात्मक शैलियों के दर्शन होते हैं।

इस संकलन में संकलित **'स्मृति'** लेख इनकी 'शिकार' पुस्तक से लिया गया है। इनमें लेखक ने बचपन के दिनों की एक रोमांचकारी घटना का वर्णन किया है। वर्णन इतना सजीव है कि पाठक का कुतूहल आद्यन्त बना रहता है। बाल-प्रकृति और बाल-सुलभ चेष्टाओं का चित्रण इसमें विशेष रूप से द्रष्टव्य है। यह लेख वर्णनात्मक शैली में लिखा गया है।

●●●

स्मृति

सन् 1908 ई0 की बात है। दिसम्बर का आखिर या जनवरी का प्रारम्भ होगा। चिल्ला जाड़ा पड़ रहा था। दो-चार दिन पूर्व कुछ बूँदा-बाँदी हो गयी थी, इसलिए शीत की भयंकरता और भी बढ़ गयी थी। सायंकाल के साढ़े तीन या चार बजे होंगे। कई साथियों के साथ मैं झरबेरी के बेर तोड़-तोड़कर खा रहा था कि गाँव के पास से एक आदमी ने जोर से पुकारा कि तुम्हारे भाई बुला रहे हैं, शीघ्र ही घर लौट जाओ। मैं घर को चलने लगा। साथ में छोटा भाई भी था। भाई साहब की मार का डर था, इसलिए सहमा हुआ चला जाता था। समझ में नहीं आता था कि कौन-सा कसूर बन पड़ा। डरते-डरते घर में घुसा। आशंका थी कि बेर खाने के अपराध में ही तो पेशी न हो। पर आँगन में भाई साहब को पत्र लिखते पाया। अब पिटने का भ्रम दूर हुआ। हमें देखकर भाई साहब ने कहा–'इन पत्रों को ले जाकर मक्खनपुर डाकखाने में डाल आओ। तेजी से जाना जिससे शाम की डाक में ही चिट्ठियाँ निकल जायँ। ये बड़ी जरूरी हैं।'

जाड़े के दिन थे ही, तिस पर हवा के प्रकोप से कँपकँपी लग रही थी। हवा मज्जा तक ठिठुरा रही थी, इसलिए हमने कानों को धोती से बाँधा। माँ ने भुँजाने के लिए थोड़े-से चने एक धोती में बाँध दिये। हम दोनों भाई अपना-अपना डण्डा लेकर घर से निकल पड़े। उस समय उस बबूल के डण्डे से जितना मोह था, उतना इस उम्र में रायफल से नहीं। मेरा डण्डा अनेक साँपों के लिए नारायण-वाहन हो चुका था। मक्खनपुर के स्कूल और गाँव के बीच पड़नेवाले आम के पेड़ों से प्रतिवर्ष उससे आम झूरे जाते थे। इस कारण वह मूक डण्डा सजीव-सा प्रतीत होता था। प्रसन्नवदन हम दोनों मक्खनपुर की ओर तेजी से बढ़ने लगे। चिट्ठियों को मैंने टोपी में रख लिया, क्योंकि कुर्ते में जेबें न थीं।

हम दोनों उछलते-कूदते, एक ही साँस में गाँव से चार फर्लांग दूर उस कुएँ के पास आ गये जिसमें एक अति भयंकर काला साँप पड़ा हुआ था। कुआँ कच्चा था और चौबीस हाथ (36 फीट) गहरा था। उसमें पानी न था। उसमें न जाने साँप कैसे गिर गया था? कारण कुछ भी हो, हमारा उसके कुएँ में होने का ज्ञान केवल दो महीने का था। बच्चे नटखट होते ही हैं। मक्खनपुर पढ़ने जानेवाली हमारी टोली पूरी वानर-टोली थी। एक दिन हम लोग स्कूल से लौट रहे थे कि हमको कुएँ में उझकने की सूझी। सबसे पहले उझकनेवाला मैं ही था। कुएँ में झाँककर एक ढेला फेंका कि उसकी आवाज कैसी होती है। उसके सुनने के बाद अपनी बोली की प्रतिध्वनि सुनने की इच्छा थी, पर कुएँ में ज्यों ही ढेला गिरा त्यों ही एक फुसकार सुनायी पड़ी। कुएँ के किनारे खड़े हुए हम सब बालक पहले तो फुसकार से चकित हो गये, जैसे किलोलें करता हुआ मृगसमूह अति समीप के कुत्ते की भौंक से चकित हो जाता है। उसके उपरान्त सभी ने उझक-उझककर एक-एक ढेला फेंका और कुएँ से आनेवाली क्रोधपूर्ण फुसकार पर कहकहे लगाये।

गाँव से मक्खनपुर जाते और मक्खनपुर से लौटते समय प्रायः प्रतिदिन ही कुएँ में ढेले डाले जाते थे। मैं तो आगे भागकर आ जाता था और टोपी को एक हाथ से पकड़कर दूसरे हाथ से ढेला फेंकता था। यह रोजाना की आदत हो गयी थी। साँप से फुसकार करवा लेना मैं उस समय बड़ा काम समझता था। इसलिए जैसे ही हम दोनों उस कुएँ की ओर से निकले, कुएँ में ढेला फेंककर फुसकार सुनने की प्रवृत्ति जागृत हो गयी। मैं कुएँ की ओर बढ़ा। छोटा भाई मेरे पीछे हो लिया, जैसे बड़े मृगशावक के पीछे छोटा मृगशावक हो लेता है। कुएँ के किनारे से एक ढेला उठाया और उझककर एक हाथ से टोपी उतारते हुए साँप पर ढेला गिरा दिया, पर मुझ पर तो बिजली-सी गिर पड़ी। साँप ने फुसकार मारी या नहीं, ढेला उसे लगा या नहीं, यह बात अब तक स्मरण नहीं। टोपी के हाथ में लेते ही तीनों चिट्ठियाँ चक्कर काटती हुई कुएँ में गिर रही थीं। अकस्मात् जैसे घास चरते हुए हिरन की आत्मा गोली से हत होने पर निकल जाती है और वह तड़पता रह जाता है, उसी भाँति वे चिट्ठियाँ क्या टोपी से निकल गयीं, मेरी तो जान निकल गयी। उनके गिरते ही मैंने उनको पकड़ने के लिए एक झपट्टा भी मारा, ठीक वैसे जैसे घायल शेर शिकारी को पेड़ पर चढ़ते देख उस पर हमला करता है। पर वे तो पहुँच से बाहर हो चुकी थीं। उनको पकड़ने की घबराहट में मैं स्वयं झटके के कारण कुएँ में गिर गया होता।

कुएँ की पाट पर बैठे हम रो रहे थे–छोटा भाई ढाढ़ें मारकर और मैं चुपचाप आँखें डबडबाकर। पतीली में उफान आने से ढकना ऊपर उठ जाता है और पानी बाहर टपक जाता है। निराशा, पिटने के भय और उद्वेग से रोने का उफान आता था। पलकों के ढकने भीतरी भावों को रोकने का प्रयत्न करते थे, पर कपोलों पर आँसू ढलक ही जाते थे। माँ की गोद की याद आती थी। जी चाहता था कि माँ आकर छाती से लगा ले और लाड़-प्यार करके कह दे कि कोई बात नहीं, चिट्ठियाँ फिर लिख ली जायँगी। तबीयत करती थी कि कुएँ में बहुत-सी मिट्टी डाल दी जाय और घर जाकर कह दिया जाय कि चिट्ठी डाल आये, पर उस समय झूठ बोलना मैं जानता ही न था। घर लौटकर सच बोलने से रूई की भाँति धुनाई होती। मार के ख्याल से शरीर ही नहीं, मन भी काँप जाता था। सच बोलकर पिटने के भावी भय और झूठ बोलकर चिट्ठियों के न पहुँचने की जिम्मेदारी के बोझ से दबा मैं बैठा सिसक रहा था। इसी सोच-विचार में पन्द्रह मिनट होने को आये। देर हो रही थी, और उधर दिन का बुढ़ापा बढ़ता जाता था। कहीं भाग जाने की तबीयत करती थी, पर पिटने का भय और जिम्मेदारी की दुधारी तलवार कलेजे पर फिर रही थी।

दृढ़ संकल्प से दुविधा की बेड़ियाँ कट जाती हैं। मेरी दुविधा भी दूर हो गयी। कुएँ में घुसकर चिट्ठियों को निकालने का निश्चय किया। कितना भयंकर निर्णय था। पर जो मरने को तैयार हो, उसे क्या? मूर्खता अथवा बुद्धिमत्ता से किसी काम को करने के लिए कोई मौत का मार्ग ही स्वीकार कर ले, और वह भी जान-बूझकर, तो फिर वह अकेला संसार से भिड़ने को तैयार हो जाता है। और फल? उसे फल की क्या चिन्ता? फल तो किसी दूसरी शक्ति पर निर्भर है। उस समय चिट्ठियाँ निकालने के लिए मैं विषधर से भिड़ने को तैयार हो गया। पासा फेंक दिया था। मौत का आलिंगन हो अथवा साँप से बचकर दूसरा जन्म, इसकी कोई चिन्ता न थी। पर विश्वास यह था कि डण्डे से साँप को पहले मार दूँगा, तब फिर चिट्ठियाँ उठा लूँगा। बस इसी दृढ़ विश्वास के बूते पर मैंने कुएँ में घुसने की ठानी।

छोटा भाई रोता था और उसके रोने का तात्पर्य था कि मेरी मौत मुझे नीचे बुला रही है, यद्यपि वह शब्दों से न कहता था। वास्तव में मौत सजीव और नग्न रूप में कुएँ में बैठी थी, पर उस नग्न मौत से मुठभेड़ के लिए मुझे भी नग्न होना पड़ा। छोटा भाई भी नंगा हुआ। एक धोती मेरी, एक छोटे भाई की, एक चनेवाली, दो कानों से बँधी हुई धोतियाँ–पाँच धोतियाँ और कुछ रस्सी मिलाकर कुएँ की गहराई के लिए काफी हुई। हम लोगों ने धोतियाँ एक-दूसरी से बाँधीं और खूब खींच-खींचकर आजमा लिया कि गाँठें कड़ी हैं या नहीं। अपनी ओर से कोई धोखे का काम नहीं रखा। धोती के एक सिरे पर डण्डा बाँधा और कुएँ में डाल दिया। दूसरे सिरे को डेंग (वह लकड़ी जिस पर चरस से पुर टिकता है) के चारों ओर एक चक्कर देकर और एक गाँठ लगाकर छोटे भाई को दे दिया। छोटा भाई केवल आठ वर्ष का था, इसलिए धोती को डेंग से कड़ी करके बाँध दिया और तब उसे खूब मजबूती से पकड़ने के लिए कहा। मैं कुएँ में धोती के सहारे घुसने लगा। छोटा भाई फिर रोने लगा। मैंने उसे आश्वासन दिलाया कि मैं कुएँ के नीचे पहुँचते ही साँप को मार दूँगा और मेरा विश्वास भी ऐसा ही था। कारण यह था कि इसके पहले मैंने अनेक साँप मारे थे। इसलिए कुएँ में घुसते समय मुझे साँप का तनिक भी भय न था। उसको मारना मैं बायें हाथ का खेल समझता था। कुएँ के धरातल से जब चार-पाँच गज रहा होगा, तब ध्यान से नीचे को देखा। अकल चकरा गयी। साँप फन फैलाये धरातल से एक हाथ ऊपर उठा हुआ लहरा रहा था। पूँछ और पूँछ के समीप का भाग पृथ्वी पर था, आधा अग्रभाग ऊपर उठा हुआ मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। नीचे डण्डा बँधा था, मेरे उतरने की गति से जो इधर-उधर हिलता था। उसी के कारण शायद मुझे उतरते देख साँप घातक चोट के आसन पर बैठा था। सँपेरा जैसे बीन बजाकर साँप को खिलाता है और साँप क्रोधित हो फन फैलाकर खड़ा होता तथा फुंकार मारकर चोट करता है ठीक उसी प्रकार साँप तैयार था। उसका प्रतिद्वन्द्वी–मैं उससे कुछ ही ऊपर धोती पकड़े लटक रहा था। धोती डेंग से बँधी होने के कारण कुएँ के बीचोबीच लटक रही थी और मुझे कुएँ के धरातल की परिधि के बीचोबीच उतरना था। इसके माने थे साँप से डेढ़-दो फुट–गज नहीं–की दूरी पर पैर रखना और इतनी दूरी पर साँप पैर रखते ही चोट करता। स्मरण रहे, कच्चे कुएँ का व्यास बहुत कम होता है। नीचे तो वह डेढ़ गज से अधिक होता ही नहीं। ऐसी दशा में कुएँ में मैं साँप से अधिक-से-अधिक चार फुट की दूरी पर रह सकता था, वह भी उस दशा में जब साँप मुझसे दूर रहने का प्रयत्न करता, पर उतरना तो था कुएँ के बीच में क्योंकि मेरा साधन बीचोबीच लटक रहा

था। ऊपर से लटककर तो साँप मारा नहीं जा सकता था। उतरना तो था ही। थकावट से ऊपर चढ़ भी नहीं सकता था। अब तक अपने प्रतिद्वन्द्वी को पीठ दिखाने का निश्चय नहीं किया था। यदि ऐसा करता भी तो कुएँ के धरातल पर उतरे बिना क्या मैं ऊपर चढ़ सकता था? धीरे-धीरे उतरने लगा। एक-एक इंच ज्यों-ज्यों मैं नीचे उतरता जाता था, त्यों-त्यों मेरी एकाग्रचित्तता बढ़ती जाती थी। मुझे एक सूझ सूझी। दोनों हाथों से धोती पकड़े हुए मैंने अपने पैर कुएँ की बगल में लगा दिये। दीवार से पैर लगाते ही कुछ मिट्टी नीचे गिरी और साँप ने फूँ करके उस पर मुँह मारा। मेरे पैर भी दीवार से हट गये और मेरी टाँगें कमर से समकोण बनाती हुई लटकी रहीं, पर इससे साँप से दूरी और कुएँ की बगल से सटाये, और कुछ धक्के के साथ अपने प्रतिद्वन्द्वी के सम्मुख कुएँ की दूसरी ओर डेढ़ गज पर–कुएँ के धरातल पर खड़ा हो गया। आँखें चार हुईं। शायद एक-दूसरे ने पहचाना। साँप को चक्षुःश्रवा कहते हैं। मैं स्वयं चक्षुःश्रवा हो रहा था। अन्य इन्द्रियों ने मानो सहानुभूति से अपनी शक्ति आँखों को दे दी हो। साँप के फन की ओर मेरी आँखें लगी हुई थीं कि वह कब किस ओर को आक्रमण करता है, साँप ने मोहनी-सी डाल दी थी। शायद वह मेरे आक्रमण की प्रतीक्षा में था, पर जिस विचार और आशा को लेकर मैंने कुएँ में घुसने की ठानी थी, वह तो आकाश-कुसुम था। मनुष्य का अनुमान और भावी योजनाएँ कभी-कभी कितनी मिथ्या और उल्टी निकलती हैं। मुझे साँप का साक्षात् होते ही अपनी योजना और आशा की असम्भवता प्रतीत हो गयी। डण्डा चलाने के लिए स्थान ही न था। लाठी या डण्डा चलाने के लिए काफी स्थान चाहिए, जिसमें वे घुमाये जा सकें। साँप को डण्डे से दबाया जा सकता था, पर ऐसा करना मानो तोप के मुहरे पर खड़ा होना था। यदि फन या उसके समीप का भाग न दबा, तो फिर वह पलटकर जरूर काटता और फन के पास दबाने की कोई सम्भावना भी होती तो फिर उसके पास पड़ी हुई दो चिट्ठियों को कैसे उठाता? दो चिट्ठियाँ उसके पास उससे सटी हुई पड़ी थीं और एक मेरी ओर थी। मैं तो चिट्ठियाँ लेने ही उतरा था। हम दोनों अपने पैंतरों पर डटे थे। उस आसन पर खड़े-खड़े मुझे चार-पाँच मिनट हो गये। दोनों ओर मोरचे पड़े हुए थे, पर मेरा मोरचा कमजोर था। कहीं साँप मुझ पर झपट पड़ता तो मैं–यदि बहुत करता तो–उसे पकड़कर कुचलकर मार देता, पर वह तो अचूक तरल विष मेरे शरीर में पहुँचा ही देता और अपने साथ-साथ मुझे भी ले जाता। अब तक साँप ने वार न किया था, इसलिए मैंने भी उसे डण्डे से दबाने का खयाल छोड़ दिया। ऐसा करना उचित भी न था। अब प्रश्न था कि चिट्ठियाँ कैसे उठायी जायँ? बस, एक सूरत थी। डण्डे से साँप की ओर से चिट्ठियों को सरकाया जाय। यदि साँप टूट पड़ा, तो कोई चारा न था। कुर्ता था, और कोई कपड़ा न था जिसे साँप के मुँह की ओर करके उसके फन को पकड़ लूँ। मारना या बिल्कुल छेड़खानी न करना–ये दो मार्ग थे। सो पहला मेरी शक्ति के बाहर था। बाध्य होकर दूसरे मार्ग का अवलम्बन करना पड़ा।

डण्डे को लेकर ज्यों ही मैंने साँप की दायीं ओर पड़ी हुई चिट्ठी की ओर उसे बढ़ाया कि साँप का फन पीछे की ओर हुआ। धीरे-धीरे डण्डा चिट्ठी की ओर बढ़ा और ज्यों ही चिट्ठी के पास पहुँचा कि फुंकार के साथ काली बिजली तड़पी और डण्डे पर गिरी। हृदय में कम्प हुआ और हाथों ने आज्ञा न मानी। डण्डा छूट पड़ा। मैं तो न मालूम कितना ऊपर उछल गया। जान-बूझकर नहीं, यों ही बिदककर। उछलकर जो खड़ा हुआ, तो देखा डण्डे के सिर पर तीन-चार स्थानों पर पीब-सा कुछ लगा हुआ है। वह विष था। साँप ने मानो अपनी शक्ति का सर्टिफिकेट सामने रख दिया था, पर मैं तो उसकी योग्यता का पहले ही से कायल था। उस सर्टिफिकेट की जरूरत न थी। साँप ने लगातार फूँ-फूँ करके डण्डे पर तीन-चार चोटें कीं। वह डण्डा पहली बार ही इस भाँति अपमानित हुआ था, या शायद वह साँप का उपहास कर रहा था।

उधर ऊपर फूँ-फूँ और मेरे उछलने और फिर वही धमाके से खड़े होने से छोटे भाई ने समझा कि मेरा कार्य समाप्त हो गया और बन्धुत्व का नाता फूँ-फूँ और धमाके में टूट गया। उसने खयाल किया कि साँप के काटने से मैं गिर गया। मेरे कष्ट और विरह के खयाल से उसके कोमल हृदय को धक्का लगा। भ्रातृ-स्नेह के ताने-बाने को चोट लगी। उसकी चीख निकल गयी।

छोटे भाई की आशंका बेजा न थी, पर उस फूँ और धमाके से मेरा साहस कुछ बढ़ गया। दुबारा फिर उसी प्रकार लिफाफे को उठाने की चेष्टा की। अबकी बार साँप ने वार भी किया और डण्डे से चिपट भी गया। डण्डा हाथ से छूटा तो नहीं, पर झिझक, सहम अथवा आतंक से अपनी ओर खिंच गया और गुंजल्क मारता हुआ साँप का पिछला भाग मेरे हाथों से छू गया। उफ, कितना ठण्डा था! डण्डे को मैंने एक ओर पटक दिया। यदि कहीं उसका दूसरा वार पहले होता, तो उछलकर मैं साँप

पर गिरता और न बचता, लेकिन जब जीवन होता है, तब हजारों ढंग बचने के निकल आते हैं। वह दैवी कृपा थी। डण्डे के मेरी ओर खिंच आने से मेरे और साँप के आसन बदल गये। मैंने तुरन्त ही लिफाफे और पोस्टकार्ड चुन लिये। चिट्ठियों को धोती के छोर से बाँध दिया, और छोटे भाई ने उन्हें ऊपर खींच लिया।

डण्डे को साँप के पास से उठाने में भी बड़ी कठिनाई पड़ी। साँप उससे खुलकर उस पर धरना देकर बैठा था। जीत तो मेरी हो चुकी थी पर अपना निशान गँवा चुका था। आगे हाथ बढ़ाता तो साँप हाथ पर वार करता, इसलिए कुएँ की बगल से एक मुट्ठी मिट्टी लेकर मैंने उसकी दायीं ओर फेंकी कि वह उस पर झपटा, और मैंने दूसरे हाथ से उसकी बायीं ओर से डण्डा खींच लिया, पर बात-की-बात में उसने दूसरी ओर भी वार किया। यदि बीच में डण्डा न होता, तो पैर में उसके दाँत गड़ गये होते।

अब ऊपर चढ़ना कोई कम कठिन काम न था। केवल हाथों के सहारे, पैरों को बिना कहीं लगाये हुए 36 फुट ऊपर चढ़ना मुझसे अब नहीं हो सकता। 15-20 फुट बिना पैरों के सहारे, केवल हाथों के बल चलने की हिम्मत रखता हूँ, कम ही, अधिक नहीं। पर उस ग्यारह वर्ष की अवस्था में मैं 36 फुट चढ़ा। बाँहें भर गयी थीं। छाती फूल गयी थी। धौंकनी चल रही थी। पर एक-एक इंच सरक-सरककर अपनी भुजाओं के बल मैं ऊपर चढ़ आया। यदि हाथ छूट जाते तो क्या होता, इसका अनुमान करना कठिन है। ऊपर आकर, बेहाल होकर थोड़ी देर तक पड़ा रहा। देह को झार-झूरकर धोती-कुर्ता पहना! फिर किशनपुर के लड़के को, जिसने ऊपर चढ़ने की चेष्टा को देखा था, ताकीद करके कि वह कुएँवाली घटना किसी से न कहे, हम लोग आगे बढ़े।

सन् 1915 ई0 में मैट्रीक्युलेशन पास करने के उपरान्त यह घटना मैंने माँ को सुनायी। सजल नेत्रों से माँ ने मुझे गोद में ऐसे बैठा लिया जैसे चिड़िया अपने बच्चों को डैने के नीचे छिपा लेती है।

कितने अच्छे थे वे दिन! उस समय रायफल न थी, डण्डा था और डण्डे का शिकार–कम-से-कम उस साँप का शिकार–रायफल के शिकार से कम रोचक और भयानक न था।

● **श्रीराम शर्मा**

अभ्यास प्रश्न

● विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों में रेखांकित अंशों की व्याख्या और तथ्यपरक प्रश्नों के उत्तर दीजिये–

(क) जाड़े के दिन थे ही, तिस पर हवा के प्रकोप से कँपकँपी लग रही थी। हवा मज्जा तक ठिठुरा रही थी, इसलिए हमने कानों को धोती से बाँधा। माँ ने भुँजाने के लिए थोड़े-से चने एक धोती में बाँध दिये। हम दोनों भाई अपना-अपना डण्डा लेकर घर से निकल पड़े। उस समय उस बबूल के डण्डे से जितना मोह था, उतना इस उम्र में रायफल से नहीं। मेरा डण्डा अनेक साँपों के लिए नारायण-वाहन हो चुका था। मक्खनपुर के स्कूल और गाँव के बीच पड़नेवाले आम के पेड़ों से प्रतिवर्ष उससे आम झूरे जाते थे। इस कारण वह मूक डण्डा सजीव-सा प्रतीत होता था। प्रसन्नवदन हम दोनों मक्खनपुर की ओर तेजी से बढ़ने लगे। चिट्ठियों को मैंने टोपी में रख लिया, क्योंकि कुर्ते में जेबें न थीं।

प्रश्न (i) प्रस्तुत गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक ने चिट्ठियों को कहाँ रख लिया था?

(iv) लेखक ने चिट्ठियों को टोपी में क्यों रख लिया?

(v) लेखक ने डण्डे की तुलना किससे की है?

(ख) साँप से फुसकार करवा लेना मैं उस समय बड़ा काम समझता था। इसलिए जैसे ही हम दोनों उस कुएँ की ओर से निकले, कुएँ में ढेला फेंककर फुसकार सुनने की प्रवृत्ति जागृत हो गयी। मैं कुएँ की ओर बढ़ा। छोटा भाई मेरे पीछे हो लिया, जैसे बड़े मृगशावक के पीछे छोटा मृगशावक हो लेता है। कुएँ के किनारे से एक ढेला उठाया और उझककर एक हाथ से टोपी उतारते हुए साँप पर ढेला गिरा दिया, पर मुझ पर तो बिजली-सी गिर पड़ी।

प्रश्न (i) प्रस्तुत गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक को कब लगा कि उस पर बिजली सी गिर पड़ी?

(ग) साँप को चक्षुःश्रवा कहते हैं। मैं स्वयं चक्षुःश्रवा हो रहा था। अन्य इन्द्रियों ने मानो सहानुभूति से अपनी शक्ति आँखों को दे दी हो। साँप के फन की ओर मेरी आँखें लगी हुई थीं कि वह कब किस ओर को आक्रमण करता है, साँप ने मोहनी-सी डाल दी थी। शायद वह मेरे आक्रमण की प्रतीक्षा में था, पर जिस विचार और आशा को लेकर मैंने कुएँ में घुसने की ठानी थी, वह तो आकाश-कुसुम था। मनुष्य का अनुमान और भावी योजनाएँ कभी-कभी कितनी मिथ्या और उल्टी निकलती हैं। मुझे साँप का साक्षात् होते ही अपनी योजना और आशा की असम्भवता प्रतीत हो गयी। डण्डा चलाने के लिए स्थान ही न था। लाठी या डण्डा चलाने के लिए काफी स्थान चाहिए, जिसमें वे घुमाये जा सकें। साँप को डण्डे से दबाया जा सकता था, पर ऐसा करना मानो तोप के मुहरे पर खड़ा होना था।

प्रश्न (i) प्रस्तुत गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) चक्षुःश्रवा के नाम से कौन-सा जीव जाना जाता है?

2. श्रीराम शर्मा का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।
3. श्रीराम शर्मा की साहित्यिक विशेषताओं को बताते हुए उनकी भाषा-शैली भी स्पष्ट कीजिए।
4. श्रीराम शर्मा के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।

● लघु उत्तरीय प्रश्न

1. 'स्मृति' निबन्ध के आधार पर बाल-सुलभ वृत्तियों को संक्षेप में लिखिए।
2. लेखक ने अपने डण्डे के विषय में क्या कहा है?
3. लेखक के कुएँ में साँप से संघर्ष के समय, उसके छोटे भाई की मनोदशा कैसी थी?
4. लेखक की तीन साहित्यिक विशेषताएँ लिखिए।
5. 'स्मृति' पाठ से आपने क्या समझा? अपने शब्दों में लिखिए।
6. 'स्मृति' पाठ से दस सुन्दर वाक्य लिखिए।
7. चिट्ठियों को कुएँ में गिरता देख लेखक की क्या मनोदशा हुई?
8. 'वह कुएँवाली घटना किसी से न कहे।' लेखक ने अपने साथी लड़के से क्यों कहा?

9. कुएँ में साहसपूर्वक उतरकर चिट्ठियों को निकाल लाने के कार्य का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
10. लेखक और साँप के बीच संघर्ष के विषय में लिखिए।

● अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

1. श्रीराम शर्मा किस युग के लेखक थे?
2. श्रीराम शर्मा ने किस पत्रिका का सम्पादन किया था?
3. 'स्मृति' लेख किस शैली में लिखा गया है?
4. चिट्ठी किसकी लिखी थी?
5. निम्नलिखित में से सही वाक्य के सम्मुख **सही** (✓) का चिह्न लगाइये–
   (अ) साँप को चक्षुःश्रवा कहते हैं। ( )
   (ब) 'स्मृति' लेख 'शिकार' पुस्तक से लिया गया है। ( )
   (स) कुआँ पक्का और दस हाथ गहरा था। ( )
   (द) 'स्मृति' में सन् 1928 की बात है। ( )

● व्याकरण-बोध

1. **निम्नलिखित समस्त-पदों का समास-विग्रह कीजिए तथा समास का नाम लिखिए–**
   विषधर, चक्षुःश्रवा, प्रसन्नवदन, भयंकर, मृगसमूह, वानर-टोली।
2. **निम्नलिखित मुहावरों का अर्थ बताते हुए वाक्य-प्रयोग कीजिए–**
   बेड़ियाँ कट जाना, बेहाल होना, आँखें चार होना, तोप के मुहरे पर खड़ा होना, टूट पड़ना, मोरचे पड़ना।

● आन्तरिक मूल्यांकन

1. अपने जीवन में घटी किसी घटना के बारे में एक संक्षिप्त लेख लिखिए।
2. श्रीराम शर्मा का संक्षिप्त जीवन-परिचय तालिका के माध्यम से दर्शाइए।

●●●